RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

हास्य–व्यंग्य का तुलनात्मक अध्ययन

चन्द्र मोहन सुपुत्र श्री हुकम सिहँ

आज हास्य–व्यंग्य शब्द परस्पर इतने घुल–मिल गए हैं कि इनको अलगाना कठिन हो गया है। हास्य के बिना व्यंग्य अधूरा सा लगता है और व्यंग्य के बिना हास्य–मसखरे की ठिठोली मात्र प्रतीत होता है। यद्यपि व्यंग्य का उद्देश्य हंसाना नहीं होता, तथापि हँसते–हँसते विसंगतियों का व्यक्त करना उसका अभिप्रायः हो सकता है। उसी भाँति हास्य का उद्देश्य मात्र हंसाना होता है तथापि हास्यकार कभी–कभी हँसी–हँसी में गहरी चोट कर जाता है। जिसहास्य रचना में मात्र हँसी के फव्वारे हों, उसका अस्तित्व स्थायी नहीं होता, क्षणिक होता है। यदि उस रचना में थोड़ा व्यंग्य भी हो तो रचना का महत्व बढ़ जाता है। यदि व्यंग्य में हास्य न हो तो वह मधुमक्खी के डंक की भाँति काटता है, हास्य के मिश्रण से व्यंग्य में थोड़ी सहजता और सरलता आ जाती है। व्यंग्य एक भाषाई कार्य है। जब से भाषा का जन्म हुआ व्यंग्य का जन्म भी हुआ। हम अपने रोजमर्रा के जीवन में बात करते समय व्यंग्य भी करते हैं, कसते हैं।व्यंग्य 'किया' जाता है, 'कसा' जाता है, व्यंग्य 'मारा' जाता है, व्यंग्य 'बाण चलाया' जाता है। ये मुहावरे व्यंग्य के तीखेपन को दर्शाते हैं।

डॉ. प्रेमनारायणदीक्षित ने व्यंग्य को उपहास की संज्ञा देते हुए उसे सहानुभूति विरोधी भाव के रुप में स्वीकार किया है।''[1]जार्ज मेरेडिथ ने व्यंग्य को परिभाषित करते हुए लिखा है–''यदि उपहास्य गोचर हो जाए तथा उसके प्रति सहानुभूति कुंठित हो जाए तो समझना चाहिए कि पकड़ में आ रहे हैं।''[2] इस प्रकार डॉ. मेरेडिथ व्यंग्य को सामाजिक व्यवहार में किसी अंग को सुधार के कारक के रुप में देखते हैं। व्यंग्य आरम्भ से बोलचाल की भाषा में तो रहा लेकिन साहित्य में इसका प्रवेश बहुत बाद में हुआ। साहित्य अपनी परिभाषा में ही सौम्य होता है। सबको साथ लेकर चलने की उसकी मंशा रहती है। सहित से 'साहित्य' बना है। लेकिन व्यंग्य सबको साथ लेकर नहीं चलता। वह समाज में व्याप्त विरोधाभासों की मजाक उडाता है। पाखण्ड पर चोट करता है। छल–प्रपंच और ऊपर से न दिखाई देने वाली विसंगतियों का परदाफाश करता है। दोगलेपन को धिक्कारता है। उसके उपहास में भी आलोचना का तत्व होता है। ऐसे में जब वह साहित्य में सहज ही प्रवेश नहीं कर पाता।अधिकतर व्यंग्य साहित्य में मजबूरी में प्रवेश करता है। जब साहित्यकार समाज में व्याप्त विसंगतियों, विद्रूपों, पाखंड को सामाजिक दवाबों या राजनैतिक कारणों से, या कभी कभी अन्यायपूर्ण व्यवस्था का खुद भी जीविका उपार्जन के लिए एक अंग होने की वजह से, प्रत्यक्षतः नहीं रख पाता तो वह उन्हें व्यंग्य के माध्यम से साहित्य को समर्पित करता है। व्यंग्य व्यंजनात्मक भाषा का प्रयोग करता है। व्यंग्य में प्रत्यक्षतः जो कहा गया है, वही उसका अर्थ नहीं होता। वह कुछ अन्य बात व्यंजित करता है। समझदार उसे समझ लेता है। अहंकार में डूबा पाखंडी व्यक्ति अक्सर उसे समझ ही नहीं पाता। व्यंग्य की इसी शक्ति का फायदा उठाकर श्रीलाल शुक्ल, सरकारी सेवा में रहते हुए भी "राग–दरबारी" लिख सके। दांते की 'डिवाइन कामेडी' मध्य कालीन व्यंग्य का एक महत्वपूर्ण कार्य है। इंग्लेंड की तत्कालीन व्यवस्था जिसमे आलोचना के लिए कोई गुंजाइश नहीं थी, का डिवाइन–कामेडी जम कर मजाक उड़ा सकी।यदि रचना में हास्य और व्यंग्य का अनुपात सही मात्रा में हो तो रचना की उत्कृष्टता में परस्पर घनिष्टता के होते हुए भी मौलिक और व्यापक अन्तर हैं।

हास्य और व्यंग्य में पहला अन्तर उत्पत्ति सम्बन्धी हैं। हास्य की उत्पत्ति के मूल में असंगति काहोना अनिवार्य है जबकि व्यंग्य का मूल विसंगति है। व्यंग्य के साथ अक्सर "हास्य" और "विनोद" जुड़ा रहता है। हम व्यंग्य–विनोद और हास्य–व्यंग्य जैसे पदों का इस्तेमाल भी करते हैं। ये शब्द समूह स्पष्टः घोषणा करते हैं कि व्यंग्य केवल व्यंग्य नहीं होता, व्यंग्य की कटुता को दूर करने के लिए विनोद और हास्य की थोड़ी बहुत आवश्यकता रहती है। लेकिन इसका यह अर्थ भी नहीं है कि हास्य व्यंग्य को कुंठित कर दे। कितना व्यंग्य और कितना हास्य–लेखक को यह तय कर पाना अक्सर मुश्किल हो जाता है। लेकिन इसी अनुपात को ठीक ठीक बरतने में ही व्यंग्य लेखक की प्रतिभा झलकती है। लेखन में पूरी तरह से हास्य बेशक संभव है।हास्य व्यंग्य का मूल स्रोत हमारी हजारों बरस पुरानी संस्कृति, सभ्यता और जीवन दर्शन में देखा जा सकता है। हास्य व्यंग्य की यह धारा वेदों के जमाने से लगातार हमारे देश मे बह रही है। इसी सांस्कृतिक अवधारणा ने हमें वह अमृत पिलाया है जिसके सबब हमारी सभ्यता आज भी सनातन कही जाती है। संस्कृत, पालि, अपभ्रंश साहित्य में हास्य व्यंग्य के हजारों उदाहरण मिल सकते हैं। कहीं ये उक्तियाँ गहरे उतर कर चोट करती हैं। कहीं सिर्फ गुदगुदा कर पाठकों और दार्शकों को हंसने पर मजबूर कर देती हैं।संस्कृत की यह धारा लोकजीवन में इस कदर रच बस गयी है कि आज भी हमारे लोकगीतों में देवताओं के साथ छेड़–छाड़, हंसी मजाक करने में लोक गायकों को कोई संकोच नहीं होता है। हरिमोहन झा ने

RRIJM 2015, All Rights Reserved

अपनी हास्य व्यंग्य पर आधारित पुस्तक खट्टर काका में देवी–देवताओं और अवतारों के साथ खूब जम कर ठिठोली की है। अगर भूल से यह पुस्तक किसी नास्तिक के हाथ लग जाये तो वह इस हंसी मजाक को गंभीरता से ले लेगा और उसकी नास्तिकता और प्रगाढ़ हो जायेगी जबकि यह देवी दवताओं के साथ किया गया मात्र हंसी मजाक है।हिन्दी और उर्दू साहित्य के विकास के साथ ही हास्य व्यंग्य विधा परवान चढ़ने लगी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और अकबर इलाहाबादी जैसे कवियों ने इसे कलेवर दिया। बाबू बालमुकुंद गुप्त अपने अन्योक्तिपूर्ण व्यंग्य लेखन के लिये व्यंग्य साहित्य में एक नया मानक बनाने मे सफल हुये। उर्दू शायरों ने तो ब्रिटिश शासनकाल में अंग्रेजियत पर ऐसे तीखे प्रहार किये कि अंग्रेज उसे समझ भी नहीं पाते थे और हिन्दुस्तानी उसका जायका लेते थे।दूसरे हास्य और व्यंग्य में एक बड़ा अन्तर उनसे उत्पन्न रस का होता है । हास्य की रस निष्पत्ति आनन्ददायक भाव में मानी जाती है, वहाँ व्यंग्य की रस निष्पत्ति, घृणा, क्रोध, वितृष्णा, जुगुप्सा ओर करुणा में मानी जाती है । हास्य का विषय किसी की वाणी या कृत्रिम अंग–विकार होता है । कर्म की विकृति भी कभी कभी हास्य को पैदा करती है। सामाजिक रुप में हास्य का उद्देश्य मात्र हंसाना होता है जबकि व्यंग्य का विषय समाज में राजनीति, शिक्षा, संस्कृति और धर्म आदि में फैली विसंगति होती है और व्यंग्य कारक उद्देश्य जनसाधारण को उस विकृति से परिचित करवाना होता है । व्यंग्य का सम्बन्ध बुद्धि और मस्तिष्क से होता है तो हास्य निर्मल हृदय का निर्मल उच्दाहा होता है ।इक्कीसवीं सदी में हास्य व्यंग्य की विधा का नया कलेवर नई दिशा की ओर संकेत कर रहा है। वह समाज की विसंगतियों का आईना है। जनभावनाओं की हसरत नापने के लिये थर्मामीटर का काम करता है। हमारे तथाकथित लोकतंत्र में जितने पाखंड विद्रूप हैं, जितनी विसंगतियाँ हैं, सियासत में छल–प्रपंच का पासा खेला जा रहा है उसका चित्रण करने के लिये गंभीर गाढ़े शब्दों में रचे गये साहित्य की जरूरत नहीं है। बेरोजगारी, जनसंख्या विस्फोट, जाति विद्वेष, धार्मिक उन्मांद के दम घोंटू वातावरण में हास्य व्यंग समाज को ऑक्सीजन देने का काम करता है। इस बहाने समाज का तनाव कम होता है और उसे राहत मिलती है।

हास्य युक्त व्यंग्य सोद्देश्य तो होता है लेकिन उसे हास्य के आवरण में ढककर कुछ ऐसे कहा जाता है कि प्रहार बहुत तीखा न हो पर जिस पर व्यंग्य किया जाये वह भी कथय के बहुत तीखेपन से ग्रहण न कर अपितु मुस्कुराते हुए हंसता रहे । इस प्रकार के व्यंग्य की मार मीठी छुरी की भाँति होती है । हास्ययुक्त व्यंग्य में व्यंग्यकार का उद्देश्य भी पूर्ण हो जाता है, उसे चुभता ही नहीं है, ऊपर से वह हँसता रहता है धीरे–धीरे व्यंग्य बूंद–बूंद करके हंसी में जहर घोलता है ।

सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार बैढ़ब बनारसी ने हास्य कानी सुन्दरी के समान है।[3]

तीसरा हास्य और व्यंग्य का अन्तर उनसे पाठक या श्रोता पर पड़ने वाले प्रभाव का है । हंसी का स्वाद मीठा और मधुर सा होता है, व्यंग्य में तिक्तता और कडुवाहट होती है । हास्य में लोग हँस– हँस कर लोट –पोट हो जाते हैं , पेट में बल पड़ जाते हैं लेकिन व्यंग्य में यातो तिलमिला उठते हैं या मुँह बनाकर रह जाते हैं ।

पाश्चात्य आलोचकों के मतानुसार हास्य और व्यंग्य में वही अन्तर है जो त्रास दी और कामदी में होता है।[4] त्रासदी का अन्त दारुण और करुण होता है जबकि कामदी का प्रसन्नता और उत्फुल्लता में होता है ।

हास्य और व्यंग्य का एक और अन्तर हास्यकार और व्यग्यकार का उद्देश्य की भिन्नता में होता है। हास्यकार का उद्देश्य मात्र हंसाना होता है या किसी का उपहास करना या खिल्ली उड़ाना जबकि व्यंग्य का उद्देश्य गम्भीर होता है । उसका समाज के प्रति एक दायित्व होता है। समाज में उसको व्यंग्यबाण से मुखरित करता है ताकि जनसाधारण भी उस गलत का साक्षात्कार करे और कुछ सुधार सम्भव हो सके। संक्षेप में हास्य और व्यंग्य की उत्पत्ति, प्रभाव और उद्देश्य में व्यापक अन्तर है । बेशक आज ये दोनों शब्द, युग्म के रुप में रुढ़ हो चुके हैं फिर भी दोनों में व्यापक भिन्नता है ।

सन्दर्भ–सूची

1 डॉ. प्रेमनारायण दीक्षित, हास्य के सिद्धान्त तथा आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ0 59

2 If you detect the ridicule and your kindness is chilled by it, you are stipping into the grasp of satire." George Meredith 'Idea of Comedy', p, 79

3 डॉ. शेरजंग गर्ग, स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृ0 70

4 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, विनोद व्यंग्य वि’’ोषांक, 13 मार्च 1966 से उद्धृत